ज्ञान तत्व अंक 135
(क) लेख – सोहराबुद्दीन हत्या कितना अपराध कितना गैर कानूनी?
(ख) लेख – भारत में साहित्य की दशा और दिशा।
(ग) श्री जयेन्द्रशाह जी, अहमदाबाद, गुजरात का प्रश्न और मेरा उत्तर ।
(घ) श्री मधु श्री काबरा, सम्पादक समाज प्रवाह, मुम्बई, महाराष्ट्र का प्रश्न और मेरा उत्तर
(च) श्री के.जी, बालकृष्ण पिल्लै का प्रश्न और मेरा विस्तृत उत्तर ।
(छ) कार्यालयीन प्रश्नों के उत्तर ।

(क) सोहराबुद्दीन हत्या कितना अपराध कितना गैर कानूनी?

गुजरात का सोहराबुद्दीन एक अपराधी था। गुजरात, राजस्थान और आंध्र सहित चार राज्यों में उसका आतंक फेला हुआ था। उस पर हत्या के कई आरोप थे। चार राज्यों ने उसके जीवित या मृत पकड़वाने पर इनाम घोषित कर रखा था। जब भारत की कानून व्यवस्था समाज को ऐसे अपराधी से मुक्ति दिलाने में असफल मान ली गई तब पीड़ित लोगों ने कुछ पुलिस अधिकारियों से सम्पर्क करके सोहराबुद्दीन और उसकी पत्नी कौसर बी को बस से उतारा और एक भवन में ले जाकर दोनों की हत्या कर दी। जांच में यह बात सिद्ध हो रही है कि सोहराबुद्दीन की हत्या एक सुनियोजित योजना के अन्तर्गत पुलिस के उच्च अधिकारियों ने की और हत्या को छिपाने के लिये मुठभेड़ के जाली दस्तावेज तैयार किये।

इस पूरे प्रकरण में दो बातें स्पष्ट हैं (1) सोहराबुद्दीन एक खूंखार अपराधी था जो हत्या तक न्यायालय से अपराध सिद्ध नहीं था। (2) पुलिस ने सोहराबुद्दीन को बिना न्यायालय में प्रस्तुत किये षड़यंत्र पूर्वक मार दिया। इस प्रकरण में विचारणीय प्रश्न यह है कि पुलिस के अफसरों ने जो कार्य किया वह अपराध है या गैर कानूनी? समाज को न्याय और सुरक्षा की गारंटी व्यवस्था ने दी है। अपराधियों को दण्डित करने के लिये व्यवस्था ने एक प्रक्रिया निर्धारित की है जो न्यायपालिका, विधायिका और कार्यपालिका के समन्वय से पूरी होती है। दण्ड प्रक्रिया किसी भी रूप में समाज का मामला न होकर व्यवस्था का आन्तरिक मामला है। समाज को जो सुरक्षा और न्याय चाहिये। यदि समाज को सुरक्षा और न्याय न मिले और व्यवस्था की कानूनी प्रक्रियाओं का पालन होता रहे तो इससे समाज को कोई लेना देना नहीं है। यदि कोई अपराधी बार–बार कानून की प्रक्रियाओं से निर्दोष घोषित होता रहता है और वह पुनः पुनः अपराध करता है तो समाज की मान्यता अनुसार उस निर्दोष अपराधी द्वारा बार–बार किये जाने वाले अपराधों के लिये व्यवस्था की प्रक्रिया दोषी है। यदि ऐसा दोष बार–बार किया जाता है तो समाज की नजरों में ऐसी व्यवस्था ही अपराधी है, जो बार–बार किसी अपराधी को निरपराध होने का प्रमाण पत्र प्रदान करती है। यदि ऐसे अपराधी को पुलिस वालों ने बिना संवैधानिक प्रक्रिया पूरी किये ही मार दिया है तो उन्होंने एक अवैध कार्य किया है जिसके लिये कानून के अनुसार उन्हें दण्डित होना चाहिये, और होंगे। भी किन्तु किसी भी आधार पर उनके इस कार्य को अवैध ही माना जा सकता है, अपराध नहीं

25–30 वर्ष पूर्व भागलपुर में कुछ पुलिस वालों ने कुछ अपराधियों के आंखों में तेजाब डालकर उन्हें अन्धा कर दिया था। भागलपुर जिले के आम नागरिकों ने पुलिस वालों का इस कार्य का भरपूर समर्थन किया था और कानून ने पुलिस वालों को दण्डित किया था। समाज की नजर में पुलिस वालों ने वहीं कार्य जो उचित था। किन्तु उनके अधिकार क्षेत्र से बाहर होने से गैर कानूनी था।

इसी तरह 20 वर्ष पूर्व मेरे गृह क्षेत्र रामानुजगंज जिला सरगुजा छत्तीसगढ़, के निकट एक थानेदार ने डकैती की जांच के अन्तर्गत दो लोगों को ऐसा पीटा कि दोनों मर गये। हमारे विधायक ने थानेदार के विरूद्ध मोर्चा खोला। रामानुजगंज शहर में जन अदालत लगी और दिनभर हजारों लोगों ने खुला विचार मंथन किया कि समाज को ऐसे प्रकरण में क्या करना चाहिये? तीन बातें तय हुई (1) यदि मृतक का अतीत निर्दोष था और थानेदार ने किसी स्वार्थवश ऐसा किया है तो उसे अपराधी मानकर उसे कठोर दण्ड देने में प्रशासन की सहायता करनी चाहिये, (2) यदि मृतक निर्दोष है किन्तु थानेदार के निःस्वार्थभाव से किये गये कार्य से यह दुर्घटना घटी तो समाज को

तटस्थ होकर कानून को अपना काम करने देना चाहिये, (3) यदि मृतक अपराधी थे किन्तु थानेदार की गलती से मर गये तो थानेदार की कानूनी मदद करनी चाहिये। जांच पड़ताल करने पर सिद्ध हुआ कि मृतक निर्दोष थे किन्तु थानेदार ने स्वार्थवश वैसा।

सुनवाई शुरू की है। सभी मामलों में न्यायालय ने कानूनी प्रक्रियाओं की अपेक्षा न्याय को अधिक महत्वपूर्ण माना है। न्यायालय के इस प्रयत्न की सम्पूर्ण समाज ने एक स्वर से प्रशंसा की है। समाज को चाहिये न्याय और सुरक्षा। समाज चाहता है अपराधियों को दण्ड। यदि आपके कानून दण्ड देने में अपर्याप्त है तो आप अपने कानूनों का सुधार करेंगे या उन्हीं घिसे पिटे कानूनों से चिपटे रहकर अपराधियों को निर्दोष और गैर कानूनी वालों को अपराधी घोषित करते रहेंगे।

यदि इक्का दुक्का मामलों में कोई अपराधी छूट जावे तो समाज कानून को कसौटी मान सकता है किन्तु जो कसौटी 90 प्रतिशत गलत पहचान करे उस कसौटी की कितनी विश्वसनीयता रहेगी? आज तो हालत यह है कि 95 प्रतिशत अपराधी निर्दोष घोषित हो रहे हैं। दर्जनों हत्याओं का अपराधी भी निर्दोष होकर अगली हत्या की तैयारी कर रहा है। ऐसी स्थिति में उस हत्यारे की अगली हत्या के लिए उसे दर्जनों बार निर्दोष सिद्ध करने वाली व्यवस्था को अपराधी मानने में गलत क्या है? जो सोहराबुद्दीन अब समाज के लोगों के विशेष प्रयत्न के बाद पकड़ा गया वह पहले या दूसरे अपराध के बाद ही क्यों नहीं पकड़ा गया? वह जेल से छूट गया इसका उत्तरदायी कौन? समाज को व्यवस्था के इस उत्तर से कोई मतलब नहीं है कि उसमें न्यायपालिका का दोष है कि पुलिस का या कानून का। समाज ने किसी सम्पूर्ण व्यवस्था को अपना भाग्य विधाता चुना है, व्यवस्था की किसी एक इकाई को नहीं यदि किसी एक इकाई की कमजोरी से अपराधी छूटता है तो यह सम्पूर्ण व्यवस्था की आस्था पर संकट आयेगा, एक इकाई पर नहीं। यह बहुत खराब परम्परा चल पड़ी है कि अपराधियों के निर्दोष छूटने का सारा दोष कार्यपालिका पर डालकर न्यायपालिका और विधायिका साफ बच निकलने का प्रयास करते रहते हैं। वस्तुतः तीनों को ही जिम्मेदारी स्वीकार करनी चाहिये। आश्चर्य की बात है कि जो व्यवस्था अपराधियों को दण्ड देने में इतनी असफल हुई कि असंवैधानिक तरीके से दण्ड देने की परिस्थितियां बनी, वही व्यवस्था राहुल महाजन के ड्रग्स प्रकरण या बाल श्रम बाल नहीं किया था इसलिये निर्णय हुआ कि हमें स्वयं को निर्लिप्त रखना चाहिये। विधायक को भी यही सलाह दी गई और थानेदार हत्या के आरोप से न्यायालय से निर्दोष सिद्ध हुआ।

मैंने सुना है कि पिछले तीन–चार वर्षों में उस क्षेत्र के नक्सलवादियों के जिन सरगनाओं को पुलिस ने न्यायालय को सौंपा वे सबके सब न्यायालय से निर्दोष प्रमाणित हो गये क्योंकि उनके डर से कोई गवाही देने वाला नहीं था। पिछले दो वर्षों में ऐसे सभी सरगना चुपचाप घर से उठा–उठा कर जंगल में फर्जी मुठभेड़ बता–बता कर मार दिये गये। एक भी वास्तविक मुठभेड़ नहीं हुई। पूरा इलाका उक्त पुलिस अफसर के गुणगान कर रहा है। अभी तीन माह पूर्व किसी शिकायत के आधार पर उक्त पुलिस अफसर का सीमान्तर कर दिया गया तो पूरे जिले में असंतोष फेल गया अंततः उसका ट्रान्सफर छत्तीसगढ़ सरकार ने रद्द किया। विचारणीय प्रश्न यह है कि उक्त पुलिस अफसर का कार्य अपराध की श्रेणी में माना जावे या ऐसे अपराधियों को स्थापित व्यवस्था द्वारा बार–बार निर्दोष सिद्ध करने को अपराध माना जावे। पूरा भारत किसे अपराध मानेगा यह पता नहीं, किन्तु हमारे क्षेत्र के लोग तो उक्त पुलिस अफसर के कार्य को अपराध नहीं मानते। क्योंकि इस क्षेत्र की पुलिस ने गैर कानूनी तरीके से उस क्षेत्र की जनता को न्याय और सुरक्षा प्रदान की है, अर्थात् हमारी स्थापित व्यवस्था न्याय और सुरक्षा के स्थान पर समाज को कानून देती है और हमारी गैर कानूनी व्यवस्था कानून के स्थान पर न्याय और सुरक्षा देती है।

सिर्फ पुलिस की कानून से हटकर सीधा न्याय देने का प्रयास कर रही हो ऐसा नहीं है। पिछले दिनों में न्यायालयों ने भी अपनी स्थापित प्रक्रियाओं से हटकर अपराधियों को दण्ड देने के कई प्रयास किये हैं। गुजरात का बेस्ट बेकरी प्रकरण बहुत पुराना नहीं हुआ है। जेसिका लाल प्रकरण भी हमें अच्छी तरह याद है। इसी माह बम्बई के किसी उद्योगपति की कार से मरे 6–7 लोगों के मामले में निचली अदालत द्वारा दी गई 6 माह की सजा को अपर्याप्त मानते हुए न्यायालय

ने बिना अपील के ही विवाह जैसे कम महत्वपूर्ण मामलों में बहुत सक्रिय और सफल होने का समाज में भ्रम फैलाती रहती है।

सोहराबुद्दीन हत्या की सीबीआई जांच के लिये मुस्लिम सासंदों का संसद भवन परिसर में धरना कुछ अटपटा लगा। सोहराबुद्दीन की हत्या का मुसलमान होने से संबंध जोड़ना एक बुरी आदत है। यदि इस हत्या के लिये मुस्लिम सांसद धर्म के आधार पर बात उठाते हैं तो उसके तथाकथित अपराधों के लिये भी तो उत्तर देना पड़ सकता है। धर्म के आधार पर संगठित होने की भी तो कुछ सीमाएं होंगी। किसी भी मामले में धर्म के आधार पर गुट बनाने की आदत नुकसान भी कर सकती है इतनी सतर्कता आवश्यकता है।

सोहराबुद्दीन सरीखी मुठभेड़े अधिकांश फर्जी होती हैं। ये मुठभेड़े गैर कानूनी होती हैं। ये लोग भले ही अपराधी हों और समाज ऐसी मुठभेड़ों से सुख अनुभव करे किन्तु ये गैर कानूनी कार्य लोकतंत्र को गंभीर क्षति पहुंचा सकते हैं। सोहराबुद्दीन की हत्या भले ही गैर कानूनी कार्य हो किन्तु उसकी पत्नी और मित्र की हत्या तो पूरी तरह अपराध है जिसके लिये कठोर दण्ड होना ही चाहिये। भारत में लोकतंत्र है। कोई कितना भी बड़ा अपराधी क्यों न हो उसे प्रशासनिक स्तर पर फर्जी मुठभेड़ में नहीं मारा जा सकता। गुजरात सरकार द्वारा ऐसे कार्य का प्रत्यक्ष या परोक्ष समर्थन तो और भी निन्दनीय है। मामले की सीबीआई जांच एक उचित कदम है और यदि ऐसे मामले में किसी रानीतिज्ञ की भी संलिप्तता हो तो कोई रियायत उचित नहीं। किन्तु ऐसे प्रकरणों की पुनरावृत्ति रोकने का यह स्थायी समाधान नहीं। स्थायी समाधान तो यही होगा कि अपराधों में दण्ड की कारगर व्यवस्था हो जिससे समाज का कानून पर विश्वास बढ़े। यदि अपराधियों के दण्ड की कारगर व्यवस्था नहीं की तो जो काम आज पुलिस वाले कर रहे हैं वह आम जनता करना शुरू कर सकती है और तब आपके लिये कानून की रक्षा और भी कठिन हो जायगी। अच्छा हो कि व्यवस्था सच्चाई को समझे और न्याय तथा कानून के बीच बढ़ती दूरी को खत्म करें।

(ख) भारत में साहित्य की दशा और दिशा

साहित्य समाज का दर्पण होता है। यदि साहित्य में कोई विकृति दिख रही है तो वह समाज की विकृति है, साहित्य की नहीं क्योंकि साहित्य तो समाज के चेहरे को स्पष्ट करने वाला दर्पण मात्र है। किन्तु साहित्य शीशे के दर्पण सरीखा निर्जीव नहीं होता। साहित्य सजीव होता है। इसलिये साहित्य का भी प्रभाव समाज पर पड़ता है। इस तरह साहित्य और समाज परस्पर एक दूसरे पर निर्भर होते हैं जो एक दूसरे पर प्रभाव भी डालते रहते हैं।

साहित्य और विचार एक दूसरे के पूरक होते हैं। एक के अभाव में दूसरे की शक्ति का प्रभाव नहीं होता। विचार तत्व होता है, मंथन का परिणाम होता है, मस्तिष्क ग्राह्य होता है, साहित्य विचारक के निष्कर्षों को आधार बनाता है, मंथन का अभाव होता है, हृदय ग्राह्य होता है, कला प्रधान होता है। विचार घी है तो साहित्य मट्ठा। विचार लंगड़ा है और साहित्य अंधा। बिना साहित्य के विचार की स्थिति एक वस्त्रहीन नारी के समान है और बिना विचार के साहित्य वस्त्रालंकृत मिट्टी की मूर्ति। दोनों का प्रभाव एक साथ जोड़कर ही हो सकता है। कुछ अपवादों को छोड़ दें तो विचार और साहित्य किसी एक ही व्यक्ति में नहीं पाया जाता। विचारकों द्वारा गंभीर विचार मंथन के बाद निकाले हुये निष्कर्ष को समाज तक पहुंचाने का दायित्व साहित्यकार का है । इस तरह विचार फल का बीज है और साहित्य पेड़ । साहित्य अपने परिणाम समाज में इस प्रकार देता है कि वह परिणाम अंत में विचार तक पहुंच जावे। न तो साहित्य के अभाव में विचारक का विचार समाज तक पहुंच पाता है। न ही विचारों के अभाव में साहित्य अन्त में समाज में विचार का स्वरूप ग्रहण कर पाता है।

वर्तमान समय में सम्पूर्ण भारत में सभी सामाजिक इकाइयों का अधः पतन हुआ है। साहित्य भी पतन से अछूता नहीं है। साहित्य में भी वैसी ही गिरावट आई है। आदर्श स्थिति वह होती है जब विचारक और साहित्यकार दोनों ही स्वतंत्र हो। बीच की स्थिति वह होती है जब विचारक और साहित्यकार दोनों ही किसी निश्चित विचारधारा के प्रति प्रतिबद्ध हों और सबसे खबरा स्थिति वह है जब साहित्यकार चारण या भाट के रूप में गुणगान पर उतर जावे। वर्तमान समाज में समाज में

विचारकों का अभाव हो गया है। मंथन प्रक्रिया मृतप्राय है।निष्कर्ष नहीं निकल रहे है। राजनेता ही विचारक बन बैठे है। राजनेता जो निष्कर्ष निकालते है, वहीं साहित्यकार के लिये विचार बन जाता है और साहित्यकार उसे ही निष्कर्ष मानकर पूरी ईमानदारी से समाज तक पहुंचा देता है। उक्त विचार न तो निष्कर्ष होता न ही मंथन प्रक्रिया होती है। अतः राजनेताओं द्वारा निकाले गये निष्कर्ष साहित्यकारों द्वारा समाज तक पहुंचने के बाद भी परिणाम शून्य होते है। राजनेता दिल्ली से दहेज चिल्लाते हैं तो साहित्यकार भी दहेज ही दहेज को समस्या के रूप में समाज के समक्ष प्रस्तुत कर देते हैं। जब राजनेता महंगाई, गरीबी, महिला अत्याचार का हल्ला करते हैं तब भी साहित्यकार इन मुद्दों को समाज तक पहुंचाने में देर नहीं करता जबकि सामाजिक समस्या अनुसंधान केन्द्र द्वारा 25 वर्षों तक विचार मंथन के बाद पाया गया कि महंगाई, गरीबी महिला अत्या, दहेज, शिक्षित बेरोजगारी जैसी समस्याएं पूरी तरह अस्तित्वहीन है किन्तु साहित्य ने उसे इस तरह समाज के समक्ष प्रस्तुत किया है कि पूरा समाज इन अस्तित्वहीन समस्याओं से भी स्वयं को पीड़ित महसूस करता है। इसमें साहित्यकारों को कोई दोष नहीं है दोष तो विचारकों के अभाव का है कि उनके अभाव में राजनेता ही विचारक बन बैठे हैं।

तीसरे तरह के साहित्यकार भी समाज की समस्याएं ही हैं क्योंकि सब लोग उन्हें व्यक्ति पूजक जानते हैं और मानते हैं। ऐसे लोगों की गिनती भाट से अधिक नहीं होती किन्तु दूसरे तरह के साहित्यकार बहुत घातक प्रभाव छोड़ रहे हैं। ये लोग स्वतंत्र न होकर किसी विचार धारा के प्रति प्रतिबद्ध होते हैं। स्वतंत्र साहित्यकार किसी से बंधा नहीं होता किन्तु ये लोग पूरी तरह बंधे होते हैं। इन प्रतिबद्ध साहित्यकारों में कई लोग मूल रूप से साहित्यकार नहीं होते बल्कि संस्थाएं ऐसे लोगों की पहचान करके उन्हें दीक्षित करती है और धीरे धीरे साहित्य के क्षेत्र में स्थापित कर देती है ये लोग साहित्य के लिए विचारों का चयन नहीं कर पाते बल्कि साहित्य की विधा का अपने लिए उपयोग करते है। प्राचीनकाल में ऐसी समस्या यदा–कदा ही होती थी किन्तु वामपंथ ने इसका भरपूर उपयोग किया। वामपंथ ने साहित्यकारों का एक अलग वर्ग बना दिया जिसने प्रगतिशील या जनवादी जैसे नामों से साहित्यकारों के गुट खड़े कर लिए। साहित्यकार की स्वतंत्रता पूरी तरह प्रतिबद्ध हो गई। इन साहित्यकारों ने ऐसा ताना बाना बुना कि धर्मनिरपेक्षता, अमेरिका विरोध आदि विचार इनके बंधक बन गये। ये वामपंथी साहित्यकार धीरे–धीरे साहित्य पर इस तरह छा गये कि स्वतंत्र साहित्य तो दिखना ही बंद हो गया। अब धीरे–धीरे दक्षिणपंथी साहित्यकारों ने भी यही मार्ग चुना है। अब संस्कृति और राष्ट्रीयता शब्द इनके गुलाम बन रहे हैं किसी भी बात को किसी भी तरह तोड़–मरोड़ कर संघ परिवार के पक्ष में स्थापित करना इनकी साहित्यकला मानी जा रही है। भारत का साहित्यिक परिवेश दो विचारधाराओं के साहित्य युद्ध में फंस गया है। अब तक जिस तरह साहित्य पर वामपंथियों का कब्जा रहा और अब जिस तरीके से महास्वेता देवी को चुनाव में हराकर नारंगजी के माध्यम से दक्षिणपंथियों ने कब्जा किया वह साहित्य के लिए शुभ लक्षण नहीं है

कला भी साहित्य का ही अंग मानी जाती है। कला का प्रभाव भी समाज पर वैसा ही होता है। कला का प्रतिबद्ध होना भी समाज के लिए कम घातक नहीं कुछ माह पूर्व ही हजरत मोहम्मद के कार्टून प्रकरण और एम.एफ हुसैन के हिन्दू देवी देवता के नग्न चित्र प्रकरण पर कलाकारों के भिन्न–भिन्न चेहरे भी हमने देखें हैं। जो कलाकार एक प्रकरण में चुप रहता है वही दूसरे प्रकरण में छाती पीट पीट कर कला के अपमान और संकट की दुहाई देता दिखता है। ऐसे लोगों को कलाकार कहने में भी शर्म आती है जो कला के नाम पर दुकानदारी कर रहे हैं या गिरोह बना रहे हैं।

स्वतंत्र साहित्यकार को किसी राजनैतिक विचारधारा मात्र का गुलाम नहीं होना चाहिये। वामपंथ पूरी तरह राजनैतिक उद्देश्यों के लिए साहित्य का उपयोग कर रहा है। दक्षिण पंथ भी अब संघ परिवार के राजनैतिक उद्देश्यों के लिये समर्पित है। नये–नये शोध, नये–नये निष्कर्ष को समाज तक पहुंचाने के लिये स्वतंत्र साहित्यकार कहां मिलेंगे। क्या अब नये विचार इसलिए समाज से बाहर हो जायेंगे कि उसे स्थापित करने के लिए उसके साथ प्रतिबद्ध साहित्यकारों का अभाव है। आज की जो स्थिति है इसके लिए वामपंथी दोषी हैं कि दक्षिण पंथी यह मेरी चिन्ता का विषय नहीं है। मेरी चिन्ता तो यह है स्वतंत्रता कहा जाकर पैर जमा सकेगी। स्वतंत्र चिन्तन को साहित्य का संबल कहां और कैसे मिलेगा ?

मैं चाहता हूं कि साहित्य समाज में विचारों का संवाहक बने और रहे किन्तु वह किसी पेशेवर दुकान का ट्रेड मार्क बनने से बचे अन्यथा साहित्य भी उसी तरह दलदल में फंस जायेगा जिस तरह धर्मनिरेक्षता या भारतीय संस्कृति।

प्रश्नोत्तर

(ग) श्री जयेन्द्रशाह जी, अहमदाबाद, गुजरात

दि प्रिजन नामक एक पुस्तक का स्वामी मुक्तानन्द जी द्वारा तैयार सारांश मुझे राजीव भगवान जी ने भेजा है। पुस्तक के सारांश के अनुसार दुनियां के विकसित देशों द्वारा विकासशील देशों के शोषण की योजना बनाने में पूंजीवाद और साम्यवाद का अन्तर भूलकर एक साथ बैठते हैं। ये देश बाहर में चाहे जितना लड़ें पर अन्दर खाने में एक हो जाते हैं। पहले अमेरिका में प्रिजन पत्रिका पर रोक लगी हुई थी किन्तु अब शायद छूट हो गयी है। आप इस पुस्तक को पढ़े या कम से कम सारांश तो अवश्य पढ़े और तब आप बताइये कि इस अन्तर्राष्ट्रीय शोषण से कैसे बचा जा सकता है।

उत्तरः – आपने दि प्रिजन पुस्तक का मुक्तानन्द जी द्वारा तैयार किया गया सारांश भेजा। इस कार्य के लिए आप और मुक्तानन्द जी प्रशंसा के पात्र हैं। सारांश के अनुसार पुस्तक में और भी विस्फोटक जानकारियों संभव है। मैं प्रयत्न करूंगा कि कभी अपनी टीम के किसी सदस्य को पुस्तक पढ़कर उपयोगी सामग्री पर चर्चा का वातावरण बनाने हेतु प्रेरित करूं।

पुस्तक के मुक्तानन्द जी द्वारा तैयार किये गये सारांश से कई नई जानकारियों मिलीं। ये जानकारियों मेरे ज्ञावर्धन के लिए तो उपयेागी है किन्तु उपयोग के लिए नहीं, क्योंकि मैंने संघर्ष के लिए जो प्राथमिकताएं तय की है उनमें यह मुद्दा शामिल नहीं है। अर्थात् यदि मैंने कोई टी.बी. का अस्पताल खोला है तो कैंसर सम्बन्धी जानकारी की उपयोगिता की एक निश्चित सीमा होती भी है और आवश्यक भी है। मैंने इस पुस्तक का उस सीमा तक उपयेाग किया है।

प्रश्न उठता है कि मैंने कैंसर से अधिक टी.बी. के अस्पताल तो प्राथमिकता क्यों दी? इस प्रश्न पर मैंने खूब विचार किया है। सम्पूर्ण विश्व के लोगों को गुलाम बनाकर रखने की दो प्रणालियां हैं। (1) सत्ता के माध्यम से (2) सम्पत्ति के माध्यम से। दोनों एक दूसरे के पूरक होते हुए भी गुलाम बनाकर रखने में सत्ता का महत्व धन की अपेक्षा कई गुना अधिक भी है और प्रभावोत्पादक भी। जो पूंजीपति देश है वे अपने देश के लोगों को गुलाम बनाकर नहीं रखते उनका प्रयत्न अपने धन की ताकत पर दूसरे देशों के लोगों या उन देशों को ही गुलाम बनाकर रखने का षड़यंत्र करती रहती है जबकि केन्द्रित सत्ता वाले देश सबसे पहले अपने देश के नागरिकों को गुलाम बनाते हैं और उसके बाद अन्य देशों को।

दूसरे देशों को गुलाम बनाकर रखने के लिए चार तरह के प्रयत्न जारी हैं। (1) पूंजीवादी देशों द्वारा पूंजी के बदल पर दूसरे देशों की सरकारों को सहायता करके या अस्थिर करके (2) साम्यवादी देशों द्वारा आर्थिक असमानता के नाम पर असंतोष पैदा करके (3) नक्सलवादियों द्वारा प्रशासनिक अव्यवस्था के विरूद्ध बन्दूक उठाकर (4) इस्लामिक देशों द्वारा धार्मिक संख्या वृद्धि और बंदूक दोनों का सहारा लेकर। सम्पूर्ण विश्व में भारत एकमात्र ऐसा देश है जहां चारों तरीके सक्रिय हैं। (1) पूंजीवादी देश भारत सरकार और भारत की सामाजिक संस्थाओं को अथाह धन देकर अपनी पिछलग्गू बना रही हैं जिसका बहुत विस्तृत वर्णन मुक्तानन्द जी के लिखित सारांश में वर्णित है। मैं उससे सहमत हूं। (2) साम्यवादी देश आर्थिक असमानता के नाम पर भारत में लगातार वर्ग संघर्ष फेला रहे हैं। यहां तक कि आर्थिक नीतियों में टकराव या भ्रम पैदा ऊर्जा पर सब्सिडी, शिक्षा पर बजट वृद्धि, बौद्धिक कार्य को शारीरिक श्रम के साथ जोड़ने, ग्रामीण गरीबों के साथ शहरी गरीबों को भी जोड़ने जैसे घातक परिणाम वाली मांग भी करते रहते हैं तो संघर्ष को बहुत क्षति होती है। ऐसी मांग करने वाले अधिकांश लोग श्रम, ग्रामीण गरीब का मुखौटा लगाकर समाज के समक्ष अपने तर्क प्रस्तुत करते हैं। भारत के आम नागरिक ऐसे लोगों का असली चेहरा पहचान नहीं पाते। गोपाल गंज जिले के महेश भाई ने ज्ञानतत्व एक सौ इक्तीस में इस विषय पर लम्बा लेख लिखकर पूछा है कि एक व्यक्ति अपने घर में कम्पूयटर लगाकर जितना प्रसन्न है उतना ही प्रसन्न गांव का एक कचरा बीनने वाला उस कम्प्यूटर के खराब होने से। बीबीसी वाला उस कचरा बीनने

वाले के लिए बिजली की मूल्य वृद्धि पर सुविधा सम्पन्नों की मन माफिक प्रतिक्रिया लेकर इस तरह प्रसारित करता है जैसे उस कचरा बीनने वाले के बिजली अधिक आवश्यक हो और कचरा बीनने की मजबूरी कम। मैं महेश भाई के कथन से सहमत रहा हूं। मेरा स्पष्ट विचार है कि गरीबी रेखा से नीचे जीवन जीने वाले ग्रामीण श्रमिक सहायता के पहले हकदार हैं। जब तक ये तीन प्रकार की मजबूरियां समाप्त नहीं होती तब तक किसी और को कोई सहायता नहीं दी जा सकती क्योंकि ये तीन मजबूरियां सम्पूर्ण मानवता के लिए कलंक हैं। इन तीन समस्याओं के निश्चित की गयी सीमा रेखा से ऊपर निकलने के पूर्व जो लोग बौद्धिक श्रम, शहरी गरीब, शिक्षा, बेरोजगारी आदि अनेक प्रकार के लोक–लुभावन मांग पत्र देते हैं वे यथार्थ में इन तीनों को नुकसान पहुंचाते हैं। ऐसे लोगों से समाज को सतर्क करने की आवश्यकता है। मैं समझता हूं कि लोक नियंत्रित तंत्र का आन्दोलन हमारी पहली प्राथमिकता है तो गरीबी रेखा के नीचे जीवन जीने वाले ग्रामीण श्रमिक की मजबूरियों को दूर करना हमारी दूसरी प्राथमिकता है। अन्य प्राथमिकताओं का निर्धारण बाद में होगा, किन्तु दो अभी निर्धारित हो चुकी हैं। यही कारण है कि **आचार्य पंकज** के नेतृत्व में प्रारम्भ **''लोकस्वराज मंच''** और ओमप्रकाश जी दुबे के मार्गदर्शन में प्रारम्भ **''श्रम शोषण मुक्ति अभियान''** को मेरा पूरा सहयोग समर्थन सामंजस्य प्राप्त है। मैं नहीं समझता कि मुक्तानन्द जी के प्रयत्न इन दोनों दिशाओं में से दोनों या किसी एक दिशा में भी आगे बढ़ने सहायक है।

फिर भी मुक्तानन्द जी जो प्रयत्न कर रहे हैं उसका मैं विरोधी नहीं क्योंकि अब तक कोई ऐसी बात नहीं आई है जो उनके प्रयत्नों को राजनैतिक होने पर चीन या रूस से प्रत्यक्ष सलाह लेने में भी ये लोग पीछे नहीं रहते। (3) नक्सलवादी समूह भारत में फैली अव्यवस्था के विरूद्ध सशस्त्र संघर्ष का विस्तार कर रहे हैं। ये लोग हिंसक संघर्ष के मामले में साम्यवादियों की भी बात सुनने के लिए तैयार नहीं हैं। (4) इस्लामिक विश्व भारत में आतेक और धार्मिक संख्या विस्तार में निरन्तर सक्रिय है। मुक्तानन्द जी के सारांश वाली पुस्तक पहले खतरे तक सीमित है जबकि मेरे विचार में अन्य तीन आक्रमण पहले प्रकार के आक्रमण से अधिक खतरनाक हैं, कम तो किसी भी रूप में हैं ही नहीं।

मैंने अपने शोध में यह निष्कर्ष निकाला है कि आर्थिक केन्द्रीयकरण की अपेक्षा राजनैतिक सत्ता का केन्द्रीयकरण कई गुना अधिक गुलामीकरण में सहायत होता है। भारत में आर्थिक असमानता बहुत खतरनाक गति से बढ़ी है किन्तु राजनैतिक सत्ता उससे भी अधिक खतरनाक परिणाम दे रही है। जो लोग राजनैतिक सत्ता के विकेन्द्रीकरण के साथ–साथ आर्थिक सत्ता के विकेन्द्रीकरण की बात करते हैं मैं उनके साथ परिस्थिति अनुसार सहभागिता सहयोग या सामंजस्य करने के लिए तैयार हूं किन्तु जो लोग सत्ता के विकेन्द्रीकरण के मामले में चुप रहकर केवल आर्थिक समस्याओं के समाधान की चिन्ता करते हैं उनसे सहभागिता समर्थन या सामंजस्य के लिए मैं समय नहीं निकाल पाता। इतना अवश्यक है कि इस खतरे को मैं समझने का खूब प्रयत्न करता हूं। भारत में एक तीसरी जमात भी बहुत आगे–आगे दिख रही है जो अपने राजनैतिक शक्ति के रूप में उभार के लिए आर्थिक असमानता को माध्यम बनाते हैं। वे मुझे सबसे ज्यादा खतरनाक दिखते हैं। मैं मुक्तानन्द जी के प्रयास को किस श्रेणी में रखूं यह विचार करना होगा किन्तु मेरे विचार में वह पहले प्रकार का प्रयास तो नहीं है जिस पर सहभागिता समर्थन या सामंजस्य की बात सोची जा सके। मेरे अनेक ऐसे मित्र हैं जो बहुत जोर–शोर से आर्थिक असमानता के विरूद्ध आन्दोलन करते हैं या संघर्ष करते हैं किन्तु चुनाव आते ही उनकी पोल खुल जाती है कि उनका सारा नाटक किसी न किसी रूप में राजनैतिक शक्ति प्राप्त करने तक ही सीमित है।

जो लोग पूंजीवाद के समर्थक हैं उनसे धोखा होने की संभावना नहीं उनके विरूद्ध हम प्रत्यक्ष योजनाएं बनाने के लिए स्वतंत्र हैं किन्तु जो लोग एक ओर तो गरीब, गरीबी, बेरोजगारी, भूख, ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए दिन रात गला फाड़–फाड़कर चिल्लाते हैं वहीं लोग जब कृषि उपज पर कर, कृत्रिम सत्ता संघर्ष के साथ जोड़ सके। मुक्तानन्द जी यदि इस विश्व स्तरीय षड़यंत्र से टकरा सकते हैं या उसे बेनकाब कर सकते हैं तो वे अवश्य करें। मैं इस कार्य की सफलता के लिए उन्हें धन्यवाद दूंगा।

(घ) श्री मधु श्री काबरा, सम्पादक समाज प्रवाह, मुम्बई, महाराष्ट्र

ज्ञानतत्व के अंक मिलते रहते हैं आपके विचारों से बहुत प्रभावित भी हूं। आपसे कभी कोई प्रत्यक्ष परिचय का अवसर नहीं मिला किन्तु विचारों से आभास होता है कि आप सर्वोदय के साथ गहराई तक जुड़े हुए हैं। मेरी भी समाज प्रवाह नाम से पत्रिका है जो आपको जाती है। मिलती होगी।

उत्तरः ज्ञानतत्व आप पढ़ते हैं यह जानकर खुशी हुई आपकी पत्रिका समाज प्रवाह अम्बिकापुर के पते पर मिलती है। मैं कभी–कभी दिल्ली से वहां घर जाता हूं तो देख पाता हूं।

सर्वोदय एक विचार भी है और एक संगठन भी। विचार हमेशा गतिशील होता है और संगठन जड़। गांधीजी और जय प्रकाश जी विचार प्रधान व्यक्तित्व थे और विनोबा जी संगठन प्रधान। मैं जीवन भर गांधी विचार से जुड़ा रहा किन्तु संगठन से कभी नहीं जुड़ सका क्योंकि संगठन कभी विचार मंथन को बरदाश्त ही नहीं करता। यह संगठन के लोगों का दोष न हो संगठन का चरित्र होता है। इसलिए यदि आप मुझे सर्वोदय विचार माने तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है यदि सर्वोदय संगठन वालों को बुरा न लगे तब। आपके विस्तृत विचार मिलें तो मुझे और खुशी होगी।

(च) श्री के.जी, बालकृष्ण पिल्लै.....

प्रश्नः – जर्मनी से प्रकाशित पत्रिका ''एडल्ट एजुकेशन एण्ड डेवलेपमेंट'' में एक लेख आया है जिसमें दुनिया के कुछ देशों की साक्षरता दर से इण्डोनेशिया की साक्षरता दर की तुलना करते हुए उसे विकास के साथ जोड़ कर समीक्षा की गयी है। वह चार्ट इस प्रकार है.....

देश का नाम	प्रत्याशित आयु वृद्धि वर्षो में	प्रौ.सा.दर (15 और प्रति. ज्यादा)	प्रा. स्तर से उच्च स्तर तक जाने वालों का प्रतिशत	क्र. क्षमता (यू. एस.डा.)	मानव वि. सूचिका
जापान	81.5	99.0	84.0	26.940	0.938
सिंगापुर	78.0	92.5	87.0	24.040	0.902
मलेशिया	73.0	88.7	70.0	9.120	0.793
थाईलैण्ड	69.1	92.6	73.0	7.010	0.768
फिलिपा.	69.8	92.6	81.0	4.170	0.753
चीन	70.9	90.9	68.0	4.580	0.745
इंडोनेशिया	66.6	87.9	65.0	3.230	0.692
वियतमान	69.0	90.3	64.0	2.300	0.691
भारत	63.7	61.03	55.0	2.670	0.595

अब हम भारत के विकास की बात करें। चार्ट से प्रमाणित होता है कि जो देश साक्षरता में आगे हैं वे ही देश औसत आयु में भी आगे बढ़ सके हैं। और क्रयशक्ति या मानव विकास में भी। स्पष्ट है कि अभी हम साक्षरता में बहुत पीछे हैं। यदि हमें विकास की दौड़ में प्रतिस्पर्धा करनी है तो साक्षरता को तेज गति से बढ़ाना होगा।

उत्तरः– उपरोक्त चार्ट को देखने से यह बात कहीं स्पष्ट नहीं होती है कि विकास में साक्षरता का योगदान है या साक्षरता में विकास का योगदान है। जापान आयु, साक्षरता क्रयशक्ति और मानव विकास में सबसे बहुत आगे है और भारत सबमें बहुत पीछे। क्या इस तालिका से यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि क्रयशक्ति बढ़ने का प्रभाव साक्षरता विस्तार पर पड़ता है?

मुझे महसूस होता हे कि शिक्षा के मामले मं हमने कुछ गलत नतीजे निकाले है। शिक्षा को रोजगार और क्रयशक्ति का आधार मानने की अपेक्षा रोजगार और क्रयशक्ति को शिक्षा का आधार मानना अधिक उपर्युक्त होता। शिक्षा को रोजगार का आधार मानते ही श्रम शक्ति की उपेक्षा शुरू हुई। यह उपेक्षा इस सीमा तक बढ़ी कि शिक्षा पर बजट बढ़ाने के लिए कृषि उपज जैसी अनिवार्य

उपभोक्ता, वस्तु और ग्रामीण उत्पादनों पर भी कर लगा दिया गया। बेरोजगारी में श्रम के साथ शिक्षा को जोड़कर शिक्षित बेरोजगार नामक नई श्रेणी बना दी गयी। परिणाम हुआ कि पचास रूपये में दिन भर काम करने वाला मजदूर श्रमिक तो रोजगार प्राप्त में शामिल हो गया और तीन सौ रूपया में भी काम न करने वाला शिक्षित युवक बेरोजगार बनकर बेरोजगारी भत्ता लेने लगा। जब तक गरीबी रेखा से नीचे जीने वाले लोग हैं तब तक उस रेखा से ऊपर वालों को किसी भी प्रकार की शासकीय सहायता का क्या औचित्य है? लेकिन भारत में यह पाप धड़ल्ले से हो रहा है कि गरीबी रेखा से नीचे वालों के उत्पादन पर भी कर लगाकर शिक्षा को प्रोत्साहन सूची में शामिल किया गया है। मैं यह जाना चाहता हूं कि शिक्षा विकास का आधार है तो श्रम को आप किस श्रेणी में रखना चाहते हैं। यदि हम विकास कर रहे हैं तो उसका गरीबी रेखा के नीचे वालों पर तो प्रभाव दिखा नहीं उल्टे उनका बजट काट–काट कर शिक्षा पर खर्च करने की नई बीमारी और खड़ी कर ली। अब हमें चाहिए कि शिक्षा, श्रम और विकास की सम्पूर्ण अवधारणा पर फिर से नई बहस छेड़कर सम्पूर्ण नीति पर विचार मंथन शुरू करें तभी इस सम्बन्ध में फेली भ्रांतिया दूर हो सकेंगी।

(छ) कार्यालयीन प्रश्नों के उत्तर

प्रश्नः– जनसत्ता 6 मई में प्रकाशित ''अजय तिवारी'' के लेख में कुछ गंभीर मुद्दे उठाये गये हैं।

(1) भोपाल के मुस्लिम युवक उमर और प्रियंका के प्रेम विवाह पर शिवसेना और बजरंग दल के कुछ लोगों ने विरोध प्रदर्शन किया। सिन्धी जातीय पंचायत ने प्रेम विवाह की बढ़ती प्रवृत्ति को नियंत्रित करने के लिए सिन्धी लड़कियों के मोबाईल रखने और मुंह ढक कर चलने पर रोक लगा दी। अजय तिवारी जी ने प्रेम विवाह का समर्थन करते हुए लिखा है कि सिन्धी समाज का यह फरमान महिलाओं की स्वतंत्रता पर अत्याचार है और अत्याचारों के विरूद्व शासन और समाज को मुखर होना चाहिए।

(2) श्री अजय तिवारी जी का कहना है कि बजरंग दल और शिवसेना वालों ने मध्य प्रदेश में एक अफवाह फैलाई है कि जिसके अनुसार सऊदी अरब से उन मुस्लिम युवकों को भारी धन प्राप्त होता है जो किसी हिन्दू लड़की से विवाह कर लें। यदि वह युवक उस लड़की को मुसलमान बना दे तो उक्त धन दुगना हो जाता है। यदि उस हिन्दू लड़की से बच्चे पैदा करें तो धन तीन गुना मिल जाता है और यदि बच्चे पैदा करके उस लड़की को छोड़ दे या तलाक दे दे तो वह रकम कई गुना बढ़ जाती है। ऐसी झूठी अफवाह ऐसे विरोध में सहायक होती है।

(3) श्री अजय तिवारी जी ने यह भी लिखा है कि राम ने सीता से प्रेम विवाह किया था और अर्जुन ने भी द्रौपदी से। पता नहीं अब हमारे राम कृष्ण के अनुयायी उमर प्रियंका के प्रेम से इतना क्यों चिढ़ रहे?

(4) मध्य प्रदेश की भाजपा सरकार भी बजरंग दल शिवसेना के हुड़दंगियों को इतनी छूट देकर प्रेम के स्थान पर घृणा को प्रोत्साहित ही कर रही है, अन्यथा शासन को तो सजग होकर प्रेम की सुरक्षा करनी चाहिए थी। न्यायालय ने अवश्य ही इस कार्य में सराहनीय पहल की।

मैं अजय तिवारी जी के उक्त लेख के साथ हैदराबाद बम काण्ड के बाद हुए आन्दोलन के सम्बन्ध में भी आपके विचार जानना चाहता हूं।

उत्तर– भोपाल में उमर प्रियंका प्रेम विवाह के विरोध में बजरंग दल शिवसेना का प्रदर्शन और हस्तक्षेप गलत था। समाज व्यवस्था में व्यक्ति परिवार और समाज रूपी तीन इकाइयां हैं। इन तीनों के अपने–अपने स्वतंत्र अधिकार भी हैं और अधिकारों की सीमाएं भी । उमर और प्रियंका इस मामले में व्यक्ति थे। उमर प्रिंयका के पृथक–पृथक जातीय या धार्मिक संगठन थे जो समाज के रूप में मान्यता प्राप्त थे। चौथा कोई और इस व्यवस्था में बिना अनुमति के हस्तक्षेप नहीं कर सकता था। बजरंग दल या शिवसेना के लोगों को उत्तर देना होगा कि इस विवाद में वे किसका प्रतिनिधित्व कर रहे थे। यदि वे धर्म का प्रतिनिधित्व कर रहे थे तो उनकी नियुक्ति किसने की कब की कैसे की? उन्हें इस घटना के विरोध में विचार व्यक्त करने तक ही अधिकार था, उसके आगे नहीं।

अब हम अजय तिवारी के विचारों की समीक्षा करें। उमर प्रियंका कोई दो आवारा और स्वतंत्र व्यक्तित्व नहीं थे। दोनों ही विवाह पूर्व तक किसी परिवार के भी सदस्य थे और किसी जाति या धर्म से भी सम्बन्ध रखते थे। विवाह एक युवक और युवती का सिर्फ व्यक्तिगत और आन्तरिक मामला ही है या उसका परिवार और समाज से भी कोई सम्बन्ध है? यदि विवाह में परिवार और समाज की कोई भूमिका है तो वह क्या है? विवाह में व्यक्ति के अधिकारों की अन्तिम सीमाएं क्या हैं इस पर भी विचार करना होगा। मैं जानता हूं कि विवाह में अन्तिम निर्णय व्यक्ति का ही होगा, किन्तु यदि परिवार का कोई सदस्य परिवार और समाज के सारे अनुशासन को तोड़कर व्यक्तिगत निर्णय ले ले तो परिवार और समाज उसे रोक तो नहीं सकता, किन्तु क्या परिवार और समाज को ऐसे मामलों में कोई भिन्न कार्यवाही करने का भी अधिकार नहीं ऐसे कुछ जटिल प्रश्नों पर विचार करने के बाद ही इस मामले की समीक्षा करनी उचित प्रतीत होती है।

विवाह दो प्रकार के होते हैं। (1) प्रेम विवाह (2) पारंपरिक विवाह श्री अजय तिवारी ने दोनों की तुलना की है जिसमें उमर प्रियंका के कार्य को प्रेम का विस्तार माना और दूसरों के कार्य को घृणा का विस्तार। उन्हें बताना होगा कि उन्होंने बजरंग दल के घृणा विस्तार के कार्य को वह पद्धति के साथ कैसे जोड़ दिया? क्या पारंपरिक विवाह घृणा फैलाते है। और सिर्फ उमर प्रियंका ही ऐसे आदर्श हुए जिन्होंने समाज में प्रेम फैलाया। **कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा, भानमती ने कुनबा जोड़ा।** उमर प्रियंका के प्रेम विवाह की प्रशंसा करते–करते बजरंग दल बीच में कहां से शामिल हुआ। बजरंग दल की न कोई पृथक विवाह पद्धति है न ही कोई प्रतिनिधित्व। अजय तिवारी जी ने विवाह पद्धति में एक ओर प्रेम और दूसरी ओर घृणा को रखकर अपनी लेखनी का पक्षपात भी प्रमाणित किया है और अज्ञान भी। उमर प्रियंका के प्रेम विवाह में विचार करना होगा कि उसमें दोनों में कितना प्रेम पैदा हुआ था और कितनी वासनात्मक भूख। दोनों का परिचय सिर्फ वासना तक ही सीमित था या मानसिक धरातल पर भी प्रेम था इसकी जानकारी मुझे तो नहीं शायद तिवारी जी कुछ जानतें हों, क्योंकि तिवारी जी ने जिस तरह उमर प्रियंका प्रेम विवाह को राम सीता के विवाह और अर्जुन द्रौपदी के विवाह से जोड़ा उससे मुझे लगा कि इस मामले में बहुत अन्दर तक जानते होंगे। मैंने तो आज तक राम सीता या अर्जुन द्रौपदी के विवाह को परंपरागत विवाह के रूप में ही सुना है। पता नहीं तिवारी जी ने इसे प्रेम विवाह कैसे मान लिया? क्या ये विवाह परिवार की सहमति के विरूद्ध हुए थे? उनके परिवार द्वारा तय व्यवस्था के अन्तर्गत ही दोनों विवाह सम्पन्न हुए जिसकी उमर प्रियंका के स्वेच्छाचारी विवाह प्रणाली से कोई तुलना नहीं हो सकती। मुझे आश्चर्य होता है कि कोई लेखकर उदाहरण देते समय इतना भी नीचे तक उतर सकता है। क्या उमर प्रियंका की तुलना अब राम और सीता से की जायेगी? मुझे इस सम्बन्ध में और अधिक चर्चा करने के पूर्व विस्तार से पता करना होगा। लेखक तिवारी जी ने अपने या अपने परिवार के कितने सदस्यों को उमर प्रियंका के रूप में प्रेम विवाह और प्रेम विस्तार की ओर सम्बन्ध समाप्त मान लें तो क्या कानून उन्हें ऐसा करने की इजाजत देगा? मेरी सोच में तो ऐसे कार्य प्रेम विस्तार के स्थान पर परिवारों में लम्बे समय के लिए अवस्था के आधार बनेंगे। ऐसे सम्बन्ध दो नव जवानों की भूल के लम्बे समय तक इतने कानूनी आर्थिक दुष्परिणाम पैदा करेंगे कि उसके माता–पिता स्वप्न में भी ऐसी संतानोत्पत्ति से बचने को अपना अहोभाग्य समझते। पच्चीस वर्षों तक तुम्हारे माता–पिता ने तुम्हारी जो सेवा की उस पर मैं कोई चर्चा नहीं कर रहा। मैं तो चर्चा यह कर रहा हूं कि तुमने बालिग होते ही स्वेच्छाचारी होना तय कर लिया तो पच्चीस वर्षों में तुम्हारी परवरिश और शिक्षा–दीक्षा पर परिवार ने जो खर्च किया उसका हिसाब–किताब कैसे होगा? क्या तुम्हारे वृद्ध माता–पिता की अपनी शर्तो पर तुम सेवा करोगे ?क्या तुम इसके बाद भी परिवार की सम्पत्ति में अपना दावा रखोगे? क्या होगा उन बूढ़े माता–पिता का भविष्य जिनकी वृद्धावस्था में उनकी संतान ने समाज में प्रेम विस्तार का फैसला कर लिया? क्या अजय तिवारी जी और उन सरीखे लोगों ने इतनी गंभीरता से इस विषय पर सोचा है? राजनीति में दस लाख व्यक्तियों के चुने हुए सांसद को इतने अनुशासन का पालन करना आवश्यक है कि वह अपने दल की सार्वजनिक आलोचना नहीं कर सकता और यदि करता है तो उसे दल से निकाल दिया जायेगा। यदि कोई सांसद दल की विचारधारा छोड़ दे तो उसे दस लाख लोगों से पुनः संसद सदस्यता की अनुमति लेनी होगी। राजनीति में इतना कठोर अनुशासन इतना अत्याचार तिवारी जी को कहीं अत्याचार

नहीं दिखा लेकिन एक परिवार अपने परिवार के सदस्य को मुंह पर पट्टी बांधकर चलने से रोक दे तो यह अत्याचार है। वह भी परिवार के इस सदस्य के साथ जिसकी पच्चीस वर्षों तक सेवा की गयी है तथा जिसके पालन–पोषण में इतना खर्च किया गया।

तिवारी जी ने भारत के मुस्लिम युवकों को हिन्दू लड़कियों से विवाह और धर्मान्तरण के लिए विदेशी सहायता की झूठी अफवाह फेलाने के नाम पर शिवसेना बजरंग दल की आलोचना की है। इस सम्बन्ध में मुझे किसी प्रकार की जानकारी नहीं है शिवसेना और बजरंग दल का प्रेरित किया और कितनों ने अपने परिवार में हम लोगों के समान घृणा का विस्तर किया? तिवारी जी को प्रेम का यह अनुभव घृणा फैलाने के बाद हुआ या पूर्व यह भी शोध का विषय है।

श्री तिवारी ने सिन्धी पंचायत द्वारा अपने परिवार की लड़कियों को मोबाइल और चेहरे पर कपड़ा बांधने से रोकने के फरमान को अत्याचार लिखा। कोई परिवार अपनी बालिग लड़की या लड़के को मोबाइल का उपयोग करने से रोके यह किस व्यवस्था के अन्तर्गत अत्याचार है। अपने परिवार की किसी महिला सदस्य को मुंह ढक कर चलने का आदेश प्रसारित करना अत्याचार है या मुंह खुला रखकर चलने का आदेश देना? परिवार की खुले मुंह चलने की अनुमति के बाद भी समाज द्वारा बुरका के रूप में पूरा शरीर ढक कर रखने के आदेश में तिवारी जी को न कोई अत्याचार दिखा न ही तुगलकी फरमान। अपने–अपने परिवार की लड़कियों के लिए जारी अनुशासनात्मक कार्यवाही में ऐसे लोगों को अत्याचार की गंध आने लगी।

परिवार समाज व्यवस्था की सबसे छोटी और पहली इकाई है। व्यक्ति जब तक परिवार का सदस्य है तब तक वह परिवार के अनुशासन से बंधा है। टकराव की स्थिति में वह परिवार छोड़ सकता है यह उसका अधिकार है। जिन परिवारों ने पारिवारिक या सामाजिक अनुशासन के नाम पर युवक–युवतियों पर सीमा से आगे जाकर अत्याचार किये उन्होंने सीमा उल्लंघन किया है और इसके लिए वे दण्डित होंगे, किन्तु कुछ परिवारों या जातीय पंचायतों ने ऐसा सीमा उल्लंघन किया है इसलिए परिवार और समाज व्यवस्था की सारी सीमाएं तोड़कर व्यक्ति को सर्वाधिकार सम्पन्न घोषित करने का परिणाम कितना बुरा होगा क्या इस पर कोई विचार हुआ? जो युवक–युवती समाज में प्रेम विस्तार के लिए सारे पारिवारिक–सामाजिक अनुशासन को तोड़ रहे हैं, क्या वे पारिवारिक सम्पत्ति से भी नाता तोड़ रहे हैं या सम्पत्ति से उनका नाता बना रहेगा? यदि लड़के और लड़की के परिवार के लोग अपनी ओर से दोनों से अब तक इतिहास जैसा रहा है उसके अनुसार यह हो भी सकता है कि वे ऐसी झूठी अफवाह फैलाते रहे हों। यह बात कितनी सच है कितनी झूठ यह बात या तो तिवारी जी बता सकते हैं या शिवसेना बजरंग दल के लोग। किन्तु मैं इतना अवश्य बता सकता हूं कि भारत में येन–केन प्रकारेण मुस्लिम सशक्तिकरण के लिए बड़ी मात्रा में मुस्लिम देशों की सहायता आती रही है जिसमें सऊदी अरब की विशेष भूमिका रही है। मैं दो वर्ष पूर्व ही दिल्ली आया हूं। पहले मैं ऐसी बातें केवल सुनता ही था, किन्तु अब तो मुझे प्रत्यक्ष अनुभव हुआ कि राष्ट्रपति बुश के भारत आगमन के विरोध के लिए विदेशी मुस्लिम देशों का भारी मात्रा में धन भारत आया। कौन नहीं जानता कि विदेशी मुस्लिम देश भारत को दारूल हरब से दारूल इस्लाम बनाने के उद्देश्य से आतंकवाद तक का सहरा ले रहे हैं धन की तो कोई गिनती ही नहीं है। ऐसी स्थिति में सऊदी अरब से हिन्दू लड़कियों से विवाह उपरान्त मुसलमान बनाने के लिए तिजोरी खोलने की अफवाह झूठी ही है यह निश्चित नहीं। किसी आदतन अपराधी के विरूद्ध प्रचार को यह कहकर ही झूठी अफवाह घोषित नहीं किया जा सकता कि उसका विरोधी आदतन झूठ बोलने वाला है। शिवसेना बजरंग दल और इस्लामिक षड़यंत्र के बीच कौन सच है कौन झूठ इस बात की गहरायी तक जाकर खोज करना और सच्चाई का पता लगाने की आवश्यकता भी मैं नहीं समझता क्योंकि दोनों गुटों के विषय में जितना सच सामने आ चुका है वही बहुत अधिक है।

हैदराबाद में बम विस्फोट हुआ। विस्फोट के तत्काल बाद मुसलमानों की भीड़ मस्जिद से बाहर निकली और उन्होंने प्रदर्शन और तोड़फोड़ शुरू कर दी। बम विस्फोट और तोड़फोड़ के बीच इतना कम अन्तर था कि उतने कम समय में कोई योजना कोई विचार–विमर्श भी संभव नहीं था। खास बात यह थी इस तोड़फोड़ और विरोध प्रदर्शन की तब तक कोई घोषित मांग भी नहीं थी। सिर्फ पुलिस के खिलाफ नारे लगाना और लूटपाट। दूसरे दिन कुछ मुस्लिम संगठनों ने योजनाबद्ध प्रदर्शन किया और मांग रखी कि ''बम विस्फोट में जिन लोगों पर संदेह किया जा रहा है वे सभी

मुसलमान हैं जो एक पक्षीय कार्यवाही है। इसके पूर्व भी मालेगांव में ऐसी ही एक पक्षीय कार्यवाही की जा चुकी है जिसमें सिर्फ मुसलमानों को ही मुलजिम बनाया गया। प्रदर्शनकारियों के अनुसार इस बात की सीबीआई जांच कराई जावे कि सिर्फ मुसलमानों पर ही ऐसी कार्यवाही क्यों होती है? क्या संघ के लोग ऐसा नहीं कर सकते जबकि कुछ समय पूर्व ही एक संघ कार्यकर्ता अपने ही घर में बम बनाते समय मारा गया था।'' इस प्रदर्शन को बड़ी मात्रा में हैदराबाद के मुसलमानों का समर्थन मिला। ज्ञात तत्व एक सौ अट्ठारह में मामलेगांव बम विस्फोट में ऐसे ही प्रयत्न पर मैंने टिप्पणी की थी। वहां तो अनेक धर्म निरपेक्षों ने ऐसी मांग उठायी थी जिसमें प्रसिद्ध गांधीवादी धर्म निरपेक्ष असगर अली इंजीनियर जी की भी प्रयत्क्ष भूमिका थी। किसी ने भी मेरे आरोप पर स्पष्टीकरण देने की आवश्यकता नहीं समझी कि असगर अली इंजीनियर जैसे व्यक्तित्व से कहीं भूल हुई है या मेरी जानकारी गलत है। हैदराबाद बम विस्फोट में फिर वही जहरीली मांग दुहरायी गयी। क्या अब अपराध और विस्फोट में भी आबादी के अनुपात में संदेह किये जायेंगे? हैदराबाद में पहले दिन जिस तरह त्वरित प्रदर्शन हुआ उससे बिल्कुल प्रमाणित हो गया है कि मुसलमानों के बीच एक ऐसा समूह बना हुआ है जो हर समय आतंकवादियों से सम्पर्क में रहता है। इस समूह का एक टुकड़ा आतंकवादी घटनाओं को अंजाम देता है तो दूसरा तत्काल ही साम्प्रदायिक उन्माद ही हवा भरना शुरू कर देता है और तीसरा आतंकवादियों की धर–पकड़ में होने वाले प्रयत्नों में किसी न किसी नाम पर बाधा उत्पन्न करना शुरू करता है। मैं हैदराबाद बम विस्फोट की सीबीआई जांच के पक्ष में हूं किन्तु मैं यह चाहता हूँ कि सीबीआई इस बात की भी जांच करे कि बम विस्फोट की घटना के तत्काल बाद प्रदर्शन और लूटपाट को प्रोत्साहित करने वालों में कहीं कोई विदेशी एजेन्ट तो नहीं था? दूसरे दिन पुलिस द्वारा मुसलमानों के विरूद्ध एक पक्षीय कार्यवाही की आवाज बुलन्द करने वाली आवाज के पीछे कौन लोग थे? जिन लोगों ने इस आवाज को उत्साहित किया उनके आतंकवादियों के साथ कैसे सम्बन्ध हैं? भारत में यह आम रिवाज क्यों बनता जा रहा है कि ऐसी घटनाओं के तत्काल बाद कानून व्यवस्था की स्थिति खड़ी करके पुलिस की कार्यक्षमता को Divert करने का प्रयत्न किया जाता है। एक बार यदि सीबीआई ऐसे चेहरे पर से पर्दा उठा दे तो समाज का बहुत भला होगा मैं सीबीआई जांच में इन मुद्दों को भी शामिल करने का पक्षधर हूं।

विस्फोट में ऐसे ही प्रयत्न पर मैं टिप्पणी की थी। वहां तो अनेक धर्म निरपेक्षों में ऐसी मांग उठायी थी जिसमें प्रसिद्ध गांधीवादी धर्मनिरपेक्ष असगर अली इंजीनियर जी की भी प्रत्यक्ष भूमिका थी। किसी ने भी मेरे आरोप पर स्पष्टीकरण देने की आवश्यकता नहीं समझी कि असगर अली इंजीनियर जैसे व्यक्तित्व से कहीं भूल हुई है या मेरी जानकारी गलत है। हैदराबाद बम विस्फोट में फिर वही जहरीली मांग दुहरायी गयी। क्या अब अपराध और विस्फोट में भी आबादी के अनुपात में संदेह किये जायेंगे? हैदराबाद में पहले दिन जिस तरह त्वरित प्रदर्शन हुआ उससे बिल्कुल प्रमाणित हो गया है कि मुसलमानों के बीच एक ऐसा समूह बना हुआ है जो हर समय आतंकवादियों से सम्पर्क में रहता है। इस समूह बड़ा आतंकवादी घटनाओं को अंजाम देता है तो दूसरा तत्काल ही साम्प्रदायिक उन्माद की हवा भरना शुरू कर देते हैं। मैं हैदराबाद बम विस्फोट की सीबीआई जांच में पक्ष में हूं, किन्तु मैं यह चाहता हूं कि सीबीआई इस बात की जांच करे कि बम विस्फोट की घटना के तत्काल बाद प्रदर्शन और लूटपाट को प्रोत्साहित करने वालों में कहीं कोई विदेशी एजेन्ट तो नहीं था? दूसरे दिन पुलिस द्वारा मुसलमानों के विरूद्ध एक पक्षीय कार्यवाही की आवाज बुलन्द करने वाली आवाज के पीछे कौन लोग थे? जिन लोगों ने इस आवाज को उत्साहित किया उनके आतंकवादियों के साथ कैसे सम्बन्ध हैं? भारत में यह आज रिवाज क्यों बनता जा रहा है।

मैं यह अनुभव करता हूं समाज व्यवस्था की प्रतिस्पर्धा में भारत की संयुक्त परिवार ग्राम गणराज्य प्रणाली सर्वश्रेष्ठ है। दुनिया की अन्य समाज व्यवस्था की प्रणालियों वैचारिक आधार पर इससे और अच्छी प्रणाली अब तक विकसित नहीं कर पाई। अन्य प्रणालियां कोई अच्छी प्रणाली का भी विकास नहीं कर पाती और भारतीय समाज व्यवस्था को स्वीकार भी नहीं कर पाती। इसलिए ये लोग भिन्न–भिन्न आधार पर भारत की समाज व्यवस्था को समाप्त करने पर तुले हुए हैं। साम्यवादी पूरी ताकत से परिवार व्यवस्था को भी कमजोर करने में सक्रिय हैं और ग्राम गणराज्य व्यवस्था को भी। पश्चिम के देश भारत की परिवार व्यवस्था को तो कमजोर करना चाहते हैं, किन्तु ग्राम गणराज्य को कमजोर या मजबूत करने में उनकी रूचि नहीं है। इस्लामिक देश भारत की परिवार

व्यवस्था से तो कोई छेड़छाड़ नहीं करते किन्तु ग्राम गणराज्य व्यवस्था को लगातार छिन्न–भिन्न करते रहते हैं। साम्यवादी और पश्चिम के देशों में कोई अपनी स्वतंत्र परिवार व्यवस्था न होने से वे भारतीय समाज व्यवस्था के दो मजबूत आधार ''**परिवार व्यवस्था और ग्रामगणराज्य व्यवस्था**'' को कमजोर करने तक ही सीमित है, किन्तु इस्लाम के पास अपनी परिवार व्यवस्था को छिन्न–भिन्न न करके ये अपनी परिवार व्यवस्था को स्थापित करना चाहते हैं। ये तीनों कहीं न कहीं भारतीय समाज व्यवस्था को छिन्न–भिन्न करने में एक दूसरे के साथ सम्पर्क में हैं। बड़ी मात्रा में पश्चिम का विदेशी धन एनजीओ के माध्यम से भारत में आता है और परिवार व्यवस्था को छिन्न–भिन्न करने के लिए प्रयत्नशील रहता है। साम्यवादी देश भी अपने भारतीय एजेन्टों को विपुल धनराशि देकर परिवार व्यवस्था और ग्राम गणराज्य व्यवस्था के विरूद्ध सक्रिय रहते हैं। इस्लामिक देशों की पूरी कार्य प्रणाली बिल्कुल भिन्न है। ये देश अपने एजेन्ट भेजकर या बनाकर धर्म के आधार पर संख्या विस्तार का प्रयत्न करते रहते हैं। इस्लामिक प्रयत्नों को पहचानना कठिन है क्योंकि ये लोग छिपे हुए विदेशी एजेन्ट होते हैं। यदि साम्यवाद पूंजीवाद या इस्लाम वैचारिक आधार पर भारत में धन खर्च करें तो हमें कोई आपत्ति नहीं। किन्तु यदि विदेशी एजेन्ट धन लेकर येन–केन प्रकारेण भारत की समाज व्यवस्था को छिन्न–भिन्न करना चाहते हैं तो यह चिन्ता की बात है।

अजय तिवारी जी अकेले ऐसे लेखक नहीं है जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से ऐसे लेख लिख रहे। मैं नहीं कह सकता कि उनका उद्देश्य क्या है? कुछ लोग ऐसे होते हैं जो हिन्दुओं की बुराईयों को दूर करने के लिए ईमानदारी चरित्र पर ही जोर दिया है और आज भी उसी के कायल हैं। चरित्र निर्माण में व्यवस्था की भूमिका होती है इस पर इन्होंने कभी सोचा ही नहीं। ये संस्कारित लोग हैं, विद्वान हैं किन्तु विचार का अभाव है। इसलिए इस सम्बन्ध में हमें चिन्तित होने की आवश्यकता नहीं।

सुदर्शन जी के कथन पर विस्तृत चर्चा करनी होगी। एक पेड़ में जहरीले फल आते थे। साठ वर्षों तक उस पेड़ के फल सुधारने के प्रयत्न हुए किन्तु फल नहीं सुधरे। चन्द्रशेखर जी धर्माधिकारी और टिपणिस सरीखे लोगों ने कहा कि पेड़ में कोई दोष नहीं, बल्कि सारा दोष हम लोगों का है कि हमें ठीक से फल का उपयोग ही करने नहीं आता। ऐसे चरित्रवान विद्वानों की तो चर्चा ही करना व्यर्थ है। संघ प्रमुख सुदर्शन जी ने निष्कर्ष निकाला कि जहरीले फलों का कारण पेड़ का प्रदूषण है। मैं भी अपने पूरे विचार मंथन के बाद इसी नतीजे पर पहुंचा हूं। भारतीय संविधान दुनिया का सबसे रद्दी और सबसे प्रदूषित संविधान है। मैंने इस सम्बन्ध में पन्द्रह वर्षों तक शोध किया है। मैं अपने निष्कर्ष के सम्बन्ध में कहीं भी किसी भी समय विचार मंथन के लिए तैयार हूं। मुस्लिम देशों का तो कोई संविधान होता नहीं। वहां तो पन्द्रह सौ वर्ष पूर्व बने संविधान का राज्य से समझौता करके उसकी ताकत पर कयामत तक पालन कराना ही व्यवस्था है। साम्यवादी देशों में भी एक ग्रुप की ही तानाशाही होती है जिसमें संविधान तो होता है किन्तु उसका शासन नहीं होता बल्कि वह स्वयं एक शासन से बंधा होता है। प्रजातांत्रिक देशों में संविधान भी होता है और संविधान का शासन भी। वैसे तो दुनिया के सभी प्रजातांत्रिक देशों के संविधानाओं में खामिया है किन्तु इस मामले में भारतीय संविधान का कोई मुकाबल नहीं यदि दुनिया के किसी भी लोकतांत्रिक देश का संविधान भारत जैसा असफल रहा हो तो आप मुझे लिखने की कृपा करें। यदि इस सम्बन्ध में कोई प्रश्न होगा तो और विस्तृत लिख सकूंगा।

सुदर्शन जी ने भारत में फैली अव्यवस्था के कारण के रूप में भारतीय संविधान की पहचान की है इससे मुझे खुशी हुई है अन्यथा अब तक तो सारी अव्यवस्था के लिए समाज को दोषी सिद्ध करने की राजनैतिक साजिश की हां में हां मिलाने का ही फैशन रहा है। किन्तु कारण समझना ही पर्याप्त नहीं है से ऐसे विचार प्रस्तुत करते हैं और यदि उन्हें समझ में आ जाये तो फिर विचार बदल लेते हैं। दूसरे कुछ ऐसे लोग होते हैं जो समाचार पत्र के मालिकों की इच्छानुसार विषय चुनकर पेशेवर रूप से ऐसे विषयों पर लिखते हैं। उनके विचार ऐसे नहीं होते। तीसरे तरह के लोग ऐसे होते हैं जो विदेशों से धन लेकर उनके एजेन्ट के रूप में काम करते रहते हैं। ये तीसरे प्रकार के लोग बहुत घातक होते हैं क्योंकि इन्हें पहचानना भी कठिन होता है और ये सुविधा सम्पन्न भी बहुत होते हैं। अजय तिवारी जी ऐसे अकेले व्यक्ति नहीं है जिन्होंने उमर प्रियंका प्रकरण के माध्यम

से भारत की परिवार और समाज व्यवस्था को क्षति पहुंचाने का काम किया है। मैं तो देख रहा हूं कि ऐसे लोगों की अखबारों में बाढ़ ही आई हुई है। अब इनमें से कौन भारतीय समाज व्यवस्था का हितैषी है, कौन पेशेवर लेखक और कौन विदेशी एजेन्ट यह छांटना संभव नहीं, किन्तु यह तो अवश्य ही कहा जा सकता है कि ऐसे प्रकरणों को प्रेम विस्तार का नाम देकर भारतीय समाज व्यवस्था को गंभीर क्षति पहुंचा रहे हैं हमें इस खतरे के प्रति सचेत और सतर्क रहना चाहिए। मैंने इस लेख में कुछ गम्भीर प्रश्न उठाये हैं। इनके समाधान में राजनीति को भी लगना पड़ेगा और समाज को भी। यह एक चटिल विषय है जिस पर विचार मंथन चलता रहेगा किन्तु एक कार्य तत्काल करना होगा कि व्यक्ति परिवार और समाज के बीच ''**अधिकार और सीमाएं विषय**'' पर एक सामाजिक बहस छेड़कर कुछ निष्कर्ष निकालने होंगे। यदि व्यक्ति परिवार और समाज के अधिकार और सीमाएं समाज में तय हो जावें तो नासमझ लोगों की समझदारी बढ़ेगी और धूर्त सफल नहीं हो सकेंगे। हमें यह कार्य शुरू कर देना चाहिए।

प्रश्नः 2 संघ प्रमुख सुदर्शन जी ने नागपुर के एक कार्यक्रम में घोषित किया कि भारतीय संविधान भारत की समस्याओं के समाधान में विफल हुआ।

अब संविधान में व्यापक संशोधन, परिवर्तन आवश्यक। मेरे विचार में सुदर्शन जी ने यह कहकर आपकी राह आसान कर दी है। उसी सभा में सर्वोदय के प्रमुख विद्वान चन्द्रशेखर जी धर्माधिकारी और भारत के पूर्व सेना प्रमुख टिपणिस जी भी मौजूद थे जिन्होंने सुदर्शन जी के कथन का विरोध किया। आप इनके विरोध में क्या मानते हैं?

उत्तरः— माननीय चन्द्रशेखर जी धर्माधिकारी और टिपणिस जी जैसे शरीफ लोगों से इससे ज्यादा उम्मीद भी नहीं करनी चाहिए। इन लोगों ने जीवन भर बल्कि इसका इलाज खोजना और करना बहुत महत्वपूर्ण है। पेड़ के फल दूषित हैं इसका कारण पेड़ पर छीटी जा रही दवा का प्रभाव है या दूषित बीज का यह शोध आवश्यक है। मुझे ऐसा लगता है कि सुदर्शन जी का ध्यान भारतीय संविधान के मूल स्वरूप के दोषों की ओर न जाकर संविधान की विभिन्न कमजोरियों की ओर ही गया। धर्म समाज के आचरण का विषय नियंत्रण या अनुशासन का नहीं। यदि समाज के लोगों का आचरण ठीक नहीं होगा तो उसे अनुशासन से ठीक करने का दायित्व समाज का है संविधान का नहीं। समाज का समाज है संविधान का नहीं। किन्तु यदि समाज के लोग दूसरों की स्वतंत्रता में बाधा डालना शुरू करेंगे तब नियंत्रण की आवश्यकता होगी और तब शासन बीच में आयगा। ऐसा शासन उच्श्रृंखल न हो जाए इसलिए समाज उस शासन की अन्तिम सीमाएं तय कर देता है। इन सीमाओं के दस्तावेज को ही संविधान कहते हैं। संविधान ऐसा होना चाहिए कि शासन पर समाज का नियंत्रण हो और शासन कभी भी स्थिति में उच्श्रृंखल न हो। यदि शासन समाज के नियंत्रण से बाहर हो जावे तो यह संविधान की विफलता मानी जायेगी और यदि ऐसा उच्श्रृंखल शासन समाज में भी उच्श्रृंखलता को प्रोत्साहित करना शुरू कर दे तो यह सामाजिक संकट की श्रेणी में आ जायेगा। आज भारत में यही हो रहा है। इसलिए गम्भीरतापूर्वक सोचना होगा कि राज्य सा राजनीति के उच्श्रृंखल होने का आधार संविधान के मूल आधार में छिपा है या संविधान के सामान्य स्वरूप में।

भारतीय संविधान का मूल आधार है '' जन कल्याणकारी राज्य'' इस मूल आधार ने राज्य को लोक नियुक्त तंत्र का आधार दिया। इसने अधिकार विभाजन में समाज को मतदान द्वारा संसद बनाने का एक अधिकार सौंप कर अन्य सारे अधिकार अपने पास रख लिए। संविधान के इस मूल स्वरूप के ही आधार पर शेष संविधान की रचना की गयी। जब मूल स्वरूप ही दोषी था तो शेष ढांचा तो उसी तरह का होना ही था। जब संविधान के मूल ढांचे में ही राजनेताओं को समाज के हर मामले में हस्तक्षेप का अधिकार दे दिया गया यहां तक कि संविधान में संशोधन तक का अधिकार दे दिया गया तो राजनेताओं को उच्श्रृंखल होने से रोकने का समाज के पास कोई अधिकार बचा ही कहां था? यह तो भारतीय राजनेताओं पर भारतीय संस्कृति का ऐसा संस्कार था कि उच्श्रृंखलता बढने में इतना लम्बा समय लगा अन्यथा ऐसा प्रावधान किसी इस्लामिक देश में रहे तो तानाशाही आना कठिन नहीं है।हम आपातकाल में ऐसे प्रावधानों की हल्की सी झलक देख भी चूके है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि जिस तरह सूदर्शन जी ने यह निष्कर्ष निकाला है कि भारतीय संविधान संशोधन भारत की समस्याओं का समाधान है वैसे ही सुदर्शन जी कुछ और आगे जाकर

यह भी निष्कर्ष निकालें कि वे संविधान संशोधन के द्वारा परिवार गणराज्यग्राम गणराज्य दिशा में संविधान संशोधन चाहे है या संविधान की बाहरी कमजोरियों को दूर करना चाहते हैं।

मैं इस मामले में पूरी तरह स्पष्ट हूं कि परिवार गणराज्य ग्रामगणराज्य प्रणाली के लिए संविधान के मौलिक स्वरूप में संशोधन ही एक मात्र मार्ग है। यदि हम संविधान के मूल स्वरूप में कोई ऐसा संशोधन न करें तो लोक नियंत्रित तंत्र की दिशा में आगे बढ़ रहा हो और केवल अन्य परी संशोधनों तक सीमित रहे तो मैं ऐसे संशोधनों में अपनी सक्रियता सहभागिता दर्ज नहीं करा सकता। और यदि ऐसा कोई संशोधन राजनीति को अधिक शक्ति सम्पन्न बनाने की दिशा में होगा तो मैं ऐसे संशोधन का विरोध करूंगा। सर्वोदय ने गांधी की शराब बंदी और ग्रामगणराज्य की दो विपरीत मान्यताओं में से जब कानून से शराबन्दी के पक्ष में जिद की और ग्रामगणराज्य की नीतियों से किनारा कर लिया तो मैंने अन्त तक इस आत्मघाती कदम का विरोध किया। अब भी मेरी यही धारणा है कि हम सबको मिल–जुलकर संविधान में दो संशोधनों द्वारा उसके मूल स्वरूप में ही परिवर्तन कर देना चाहिए जिससे तंत्र पर लोक को मजबूत आधार मिल सके।

मैंने सोमनाथ जी चटर्जी को भी इस सम्बन्ध में पत्र लिखा है और सुदर्शन जी को भी। मैं नहीं कह सकता कि सुदर्शन जी की घोषणा में मेरी भी कोई भूमिका है या निष्कर्ष उनकी स्वतंत्र सोच का परिणाम है। किन्तु मैं इतना अवश्य कह सकता हूं कि सुदर्शन जी ने यह घोषणा करके लोक स्वराज्य की दिशा में आगे बढ़ने का मार्ग प्रशस्त किया है। मैं चाहता हूं कि वे इस दिशा में और आगे बढ़कर समाज को लोक स्वराज्य की दिशा में आगे बढ़ने का मार्ग प्रशस्त करें।

राजनेताओं के नाटक के दस सूत्रः–

(1) समाज को कभी एकजुट न होने देना। समाज में आठ आधारों पर वर्ग निर्माण विद्वेष फैलाकर वर्ग संघर्ष की स्थिति निर्मित करना। आठ आधार है धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्रीयता, उम्र, लिंग, आर्थिक स्थिति और उत्पादक उपभोक्ता।

(1) समाज शब्द को कमजोर करके राष्ट्र भाव को मजबूत करना।

(1) समाज में वैचारिक बहस को पीछे करके भावनात्मक मुद्दों पर बहस जारी रखना।

(1) अधिक से अधिक कानून बनाना जिससे आम नागरिक अपराध भाव से ग्रसित रहे।

(1) आम नागरिकों को अक्षम अयोग्य और अनपढ़ कहकर उनमें हीन भाव भरना।

(1) क. आर्थिक और सामाजिक समस्याओं का प्रशासनिक समाधान कारना।
ख. सामाजिक और प्रशासनिक समस्याओं का आर्थिक समाधान कारना।
ग. प्रशासनिक और आर्थिक समस्याओं का सामाजिक समाधान करना।

(1) समस्याओं का ऐसा समाधान करना कि उस समाधान से ही किसी नई समस्या का जन्म हो।

(1) बिल्लियों के बीच बन्दर की ऐसी भूमिका बनाना कि –
क. बिल्लियों की रोटी कभी बराबर न हो।
ख. बन्दर हमेशा रोटियों को बराबर करता हुए दिखे। किन्तु करे नहीं।
ग. छोटी–रोटी वाली बिल्ली के मन असंतोष की ज्वाला जलती रहे।

(1) आर्थिक असमानता प्रजातांत्रिक तरीके से बढ़ती रहे इसके लिए जो वस्तु गरीब लोग अधिक और अमीर लोग कम मात्रा में प्रयोग करें उन पर अप्रत्यक्ष कर लगाना और प्रत्यक्ष सब्सिडी देना।

ख. जो वस्तु अमीर लोग अधिक और गरीब लोग कम मात्रा में प्रयोग करें उन पर प्रत्यक्ष कर लगाना और अप्रत्यक्ष सब्सिडी देना।

(1) विपरीत प्राथमिकताएं निर्धारित करना। वास्तविक समस्याओं को अंतिम प्राथमिकता और अस्तित्वहीन समस्याओं के समाधान को सर्वोच्च प्राथमिकता देना।

आपने हमारे अभियान से जुड़ने वाले साथियों के व्यक्तिगत और सामाजिक आचरण की आचार संहिता की आवश्यकता बताई है। मैंने इस विषय में बहुत सोचा हैं। विचार की अपेक्षा चरित्र का प्रभाव बहुत पड़ता है यह सही है। समाज सुधार के लिए चरित्र आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। हम नई व्यवस्था के निर्माण में जो अभियान शुरू करेंगे उसमें इस बात का पूरा–पूरा ध्यान रखेंगे। किन्तु अभी हम जो अभियान शुरू कर रहे हैं उसके लिए कोई शर्त लगाना उचित नहीं।

शासन के अधिकार दायित्व और हस्तक्षेप न्यूनतम होना चाहिए यह बात चरित्रवान कहें तो ज्यादा असर होगा किन्तु चरित्रवानों को छोड़कर अन्य लोग ऐसा न कहें या उनके ऐसा कहने से कोई हानि होगी, ऐसा मैं नहीं मानता। आप जो कह रहे हैं वह बात पूरी तरह सैद्धान्तिक है और वही बात कही जानी चाहिए। मैंने जो कहा है कि वह हर पाठक को सिद्धान्त विरूद्ध लगेगा। किन्तु कर्ण कटु होते हुए भी यह विचार पूरी तरह व्यावहारिक है। इस प्रश्न पर आवश्यकतानुसार और चर्चा हो सकती है। आज समाज में करीब एक दो प्रतिशत चरित्रवान लोग दिखते हैं और एक दो प्रतिशत ही अपराधी तत्व हैं। शेष पंचान्नवे प्रतिशत लोग बीच के हैं जो चरित्रवानों की तुलना में चरित्रहीन और अपराधियों की तुलना में चरित्रवान दिखायी देते हैं। आम तौर पर ये एक प्रतिशत चरित्रवान अपने चरित्र के घमण्ड में बीच वालों को हेय मानते हैं जबकि अपराधी तत्व उन्हें गले लगाते हैं वर्तमान घातक स्थिति में इन पंचान्नवे प्रतिशत अपराधियों से अलग करने की आवश्यकता है। हमने अपने शहर रामानुजगंज में यही नीति अपनाई। हमने अपराधियों के लिए तीन शब्द बनाया और उन्हें दो नम्बर से पृथक किया। हमें सफलता मिली। मेरे विचार से आपत्तिकाल और युद्धभूमि में आदर्श और चरित्र की सामान्य परिभाषा को लेकर चलने पर पुनर्विचार आवश्यक है। यही आपत्तिकाल में राम का चरित्र था कौर यही कृष्ण का।

धन्यवाद।